आदर्श विवाहों का प्रचलन कैसे हो ?

आदर्श विवाहों का प्रचलन कैसे हो ?

इस युग की यह निर्विवाद आवश्यकता है कि हम भारतीय अपने विवाह–शादियों में होने वाले अनावश्यक अपव्यय को जल्द से जल्द बन्द करें । हमारी औसत आमदनी इतनी नहीं है जिसमें कि मनुष्य की तरह ठीक प्रकार जिया जा सके । यदि किसी की कुछ आमदनी अच्छी हो भी तो उसको उचित है कि अपने और अपने परिवार की प्रगति के आवश्यक कार्यों में उसका उपयोग करे ।

स्वास्थ्य बिगड़े पड़े हैं, पौष्टिक आहार और अच्छी चिकित्सा के बिना हम में से अधिकांश व्यक्ति दुर्बलता और अस्वस्थता के शिकार हैं । शिक्षा वृद्धि के साधन–सुविधा जुटाये बिना हमारा बौद्धिक स्तर गया–गुजरा ही बना रहेगा । आजीविका में वृद्धि के लिए कुछ नये उद्योग आदि आरम्भ करने या वर्तमान साधनों को सुधारने, बढ़ाने के लिए पूँजी चाहिए । फिर देश, धर्म, समाज, संस्कृति की स्थिति भी दयनीय है, उन्हें सुविकसित बनाने के लिए आर्थिक योगदान करना हमारा नैतिक कर्तव्य है । इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति हम कहाँ कर पाते हैं ? उचित आवश्यकताऐं पूरी करने के लिए हमारी आर्थिक स्थिति अब की अपेक्षा बहुत अच्छी होनी चाहिए । अभाव के कारण प्रगति का मार्ग बहुत हद तक अवरुद्ध ही पड़ा रहता है और किसी प्रकार जिन्दगी के दिन पूरे करना ही वर्तमान स्थिति एवं साधनों में सम्भव हो पाता है । समृद्ध, सुविकसित जीवन की आकांक्षा पूरी करने की व्यवस्था आर्थिक कठिनाइयाँ बनने ही नहीं देतीं ।

गाढ़ी कमाई का खेदजनक अपव्यय

इन अभावग्रस्त परिस्थितियों में बुद्धिमत्ता का तकाजा एक ही है कि हम अपनी गाढ़ी कमाई का एक–एक पैसा उचित आवश्यकताओं की पूर्ति में खर्च करें । अपव्यय को अपना घोर शत्रु

समझें और निरर्थक खर्च की जो बात दिखाई पड़े उसे तुरन्त रोकें। इस बचत पर ही हमारी प्रगति की सम्भावनाऐं निर्भर हैं। जब हम फिजूलखर्ची में अपनी गाढ़ी कमाई फूँकते रहेंगे तो स्वभावतः स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यवसाय, परमार्थ आदि आवश्यक कार्यों की दिशा में हमें वंचित ही रहना पड़ेगा। आर्थिक दुर्दशाग्रस्त व्यक्तियों के लिए अपव्यय की भूल करना एक प्रकार से आत्महत्या के बराबर है।

इसे दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि अभावग्रस्त, दयनीय स्थिति में गुजारा करने वाले भारतीय विवाह–शादियों के नाम पर अपनी आमदनी का एक–तिहाई भाग स्वाहा कर दें। गरीब आदमी जब अमीरी का स्वांग रचता है तो उसके फूहड़पन पर किसे तरस न आवेगा। हमारी मानसिक स्थिति वस्तुतः बड़ी दयनीय है। जिन दिनों घर में विवाह–शादी होते हैं, उन दिनों नकली अमीरी प्रदर्शित करने के ऐसे–ऐसे नाटक रचते हैं, जिन्हें थोड़ी विवेकशीलता की दृष्टि से देखा जाय तो उस भौंड़ी सूझ–बूझ पर घृणा ही व्यक्त की जा सकती है। जिस समाज के लोगों का व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन इतनी गई–गुजरी दयनीय स्थिति में पड़ा हो, वे विवाह जैसी बिलकुल सामान्य–सी बात पर इतना पैसा उड़ावें तो उनकी समझदारी में कौन सन्देह न करेगा ?

परम्पराओं के नाम पर हम जिस जंजाल में फँसे गये हैं अब उससे छुटकारा पाना ही उचित है। प्रत्येक विचारशील दूरदर्शी और देशभक्त व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह साहसपूर्वक आगे बढ़कर लोगों के मस्तिष्क में मकड़ी के जाले की तरह फैले हुए इस भ्रम की सफाई करने का प्रयास करे। बाहरी शत्रु उतनी हानि नहीं पहुँचाते जितने भीतरी भ्रम जंजाल। विवाहों में होने वाला अपव्यय एक प्रकार का आर्थिक उन्माद है। आज यह बुराई छूत के रोगों की तरह सारे समाज को ग्रसित किए बैठी है। उसका उपचार न करना एक भयानक बात होगी। मनस्वी व्यक्तियों ने

साहसपूर्वक आगे बढ़ कर बड़ी से बड़ी समस्याओं के हल निकाले हैं । कड़ी से कड़ी कठिनाइयों को परास्त किया है । फिर क्या हम इतना भी न कर सकेंगे कि अपने जमाने की एक विशुद्ध मूढ़ता को ललकारें और उसे जन-जीवन का सत्यानाश कर डालने से रोकें ।

बीमारी और उसका उपचार

बीमारी केवल अविवेकशीलता, मूढ़ता, अन्ध परम्परा एवं भीरुता की है । यों उससे दुःखी हर व्यक्ति है । वह उसकी व्यर्थता एवं हानि को भी समझता है, पर मनोबल एवं विवेक के अभाव में कर कुछ नहीं पाता । असहाय बना एक चलते हुए ढर्रे का अंग मात्र बन कर रह जाता है । इस मानसिक दुर्दशा से समाज का पिण्ड छुड़ाया ही जाना चाहिए अन्यथा यह बौद्धिक दुर्बलता अनेक क्षेत्रों में बढ़ती पनपती रहेगी और आर्थिक ही नहीं प्रत्येक क्षेत्र में हमें प्रतिगामी एवं दीन-हीन ही बनाये रहेगी ।

जिस बात को हम अनुपयुक्त समझते हैं उसे ही कुड़मुड़ाते हुए करते भी रहें यह मानवीय विवेक एवं साहस का खुला तिरस्कार है । इसी को आत्म-हनन कहते हैं । आत्म हत्यारे को शास्त्रों में महापातकी बताया गया है । सभी पापों का दण्ड मिलता है फिर इस महापातक का क्यों न मिलेगा ? भारतीय समाज को अनेक प्रकार के शोक सन्तापों का सामना करना पड़ रहा है, इसका एक कारण हमारा यह महापातक भी है, जिसके कारण हम अनुपयुक्त जँचने वाली विवाहोन्माद जैसी भयानक कुरीति को हटाने का न तो साहस करते हैं और न प्रयत्न । संसार के श्रेष्ठ पुरुषों ने अपने जमाने की, अपने समाज की भयानक कठिनाइयों को परास्त किया है और अवरुद्ध प्रगति-पथ को खोलने के लिए प्राणों की बाजी लगाकर भी बहुत कुछ किया है । एक हम हैं जो छुट-पुट कुरीतियों को हटाने के लिए भी कुछ नही कर पाते । जिन मूढ़ताओं के विरुद्ध आज सारा मानव समाज विरुद्ध-रुष्ट हो उठा है,

उसे हटाने–मिटाने को तो एक हल्का–सा आन्दोलन, छोटा–सा संगठन एवं थोड़ा–सा पुरुषार्थ पर्याप्त हो सकता है । यदि हम इतना भी न जुटा सकें तो इतिहासकारों की दृष्टि में अपनी गिनती असहाय दीन–हीन कायर लोगों में ही होगी । क्या यही कलंक कालिमा मुँह पर पोते इस संसार से विदा होना हमारे लिए उचित है ?

इन्सान की तरह रहें, इन्सान की तरह सोचें

हमें इन्सानों की तरह रहना है तो इन्सान की तरह सोचना भी होगा और वह परम्परा अपनाने का साहस करना होगा जिसे अपने समय में विवेकशील पुरुषार्थी एवं देश भक्त लोग अपनाते रहे हैं । ऐसे लोगों को सदा से अपने सीमित दायरे से आगे की बातें सोचनी पड़ती हैं और व्यक्तिगत स्वार्थों से आगे बढ़कर बिगड़ी हुई परिस्थितियों को बनाने के लिए कुछ करना पड़ता है । हमें बहुत कुछ करना है । इस सड़ी–गली दुनियाँ को बदल कर एक नये प्रगतिशील एवं सुविकसित संसार का निर्माण करना है । भावी पीढ़ियों के लिए हमें यही उपहार एवं अनुदान छोड़ जाना चाहिए । अपने मतलब से मतलब रखने वाले घृणित लोगों की श्रेणी में गिने जाने वालों की पंक्ति में हमें नहीं ही खड़ा होना चाहिए । स्वार्थ के साथ परमार्थ का समन्वय करते हुए जीवन की गतिविधियाँ विकसित करने का मानवोचित साहस हमें करना ही चाहिए ।

जिनमें ऐसा विवेक एवं साहस जागृत हो सके उनका कर्तव्य है कि आगे बढ़कर आयें और 'नव निर्माण' के महत्त्वपूर्ण कार्यों में से एक अत्यन्त आवश्यक कार्य 'विवाहोन्माद का उपचार' अपने हाथ में लेने का प्रयास करें ।

इस दिशा में सबसे प्रधान, सबसे आवश्यक जो कहना है, वह यह है कि इन भावनाओं को कार्य रूप में जन–मानस में जागृत करने का प्रयत्न किया जाय । किसी सभा में प्रस्ताव पास कर देने, भाषण दे डालने या लेख लिखने के सस्ते तरीके से इस

सत्यानाशी की जड़ की तरह चिरकाल से जमी बैठी मूढ़ता का उन्मूलन सम्भव न होगा । इसके लिए घर–घर, मनुष्य–मनुष्य के पास जाना होगा और उसे समझाना होगा कि साधारण–सी दीखने वाली यह कुरीति कितनी घातक, कितनी भयानक एवं कितनी कष्टकारक है ? जिस बुराई के लोग अभ्यस्त हो जाते हैं वे उसकी हानियों को भी भूल जाते हैं । भारतीय समाज को इस कुरीति से होने वाली हानि का इतना अभ्यास हो गया है कि नशेबाजी में स्वास्थ्य, धन, यश, बुद्धि सब कुछ खो बैठने पर भी उसे छोड़ने की बात न सोचने वालों की तरह उसे यह विचार तक नहीं होता कि उसे छोड़ा जाना चाहिए या छोड़ा जा सकता है । हमने एक प्रकार से इस बुराई के साथ समझौता कर लिया है और ऐसा मान लिया है मानो वह भी हमारे जीवन का एक अंग है । यह स्थिति बदली जानी चाहिए । जब तक किसी बुराई के दोषों को गहरी दृष्टि से न देखा–समझा जाय, तब–तक उसकी हानि समझ में नहीं आती और उसे छोड़ने की इच्छा भी नहीं होती । अतएव पहला काम यही करने का है कि लोगों को वस्तुस्थिति से परिचय कराया जाय और उनमें इस प्रकार आत्महत्या न करने के लिए साहस पैदा किया जाय ।

सोने वालों को जगाया जाय

इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए यह छोटी पुस्तिकायें लिखी गई हैं जो आपके हाथ में हैं । इन दस पुस्तिकाओं में कुल मिलकार वह प्रेरणा मौजूद है, जिसे पढ़ने–सुनने से उनींदे पड़े लोगों की आँखें खुल सकती हैं । सोने वालों को जगाना हमारा पहला काम होना चाहिए । यह पुस्तक माला जितने अधिक लोगों को पढ़ाई जा सकती है, पढ़ानी चाहिए । जो पढ़े–लिखे नहीं हैं उन्हें सुनाने का प्रबन्ध करना चाहिए । प्राचीनकाल की सन्त परम्परा में 'अलख–जगाने' की एक साधना थी । जिसके अनुसार साधुओं को दरवाजे–दरवाजे पर धार्मिक सन्देश देने के साथ ही भिक्षा माँगने जाना पड़ता था । भारत में अब विचारशील सन्त

नहीं रहे । इसलिए उस कार्य को हम में से प्रत्येक को करने के लिए, अलख जगाने को कटिबद्ध होना चाहिए ।

प्रस्तुत पुस्तिकायें उस व्यक्ति के द्वारा लिखी गई हैं जिसके जी में अपने समाज को प्रबुद्ध, समृद्ध, सशक्त एवं सुसंस्कृत बनाने की आग निरंतर जलती रहती है, जो हनुमान की तरह अपनी पूँछ में आग लगाकर मूढ़ता की लंका को जला डालने के लिए आतुर हो रहा है । जिस कसक, तड़पन और टीस के साथ यह पन्ने लिखे गये हैं, उनमें वह क्षमता होनी चाहिए कि पढ़ने-सुनने वाले को कुछ तो प्रभावित कर सकें । इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं कि जो इन विचारों को पढ़ेगा-सुनेगा उसमें वह साहस और विवेक उत्पन्न होगा जिसके आधार पर जो उचित है उसे अपनाने की तत्परता उत्पन्न हो सके । जो कमी रह जाय वह उस व्यक्ति को पूरी करनी चाहिए जो अलख जगाने की पुण्य प्रक्रिया सम्पन्न करने के लिए तत्पर हुआ है ।

आप अपना कुछ समय नियमित रूप से इस सत्प्रयत्न में लगाने के लिए निर्धारित कर लें । छुट्टी का दिन इस कार्य के लिए पूरा लगाया जा सकता है । आजीविका सम्बन्धी काम पूरा करने के उपरान्त कुछ समय जन-सम्पर्क के लिए, विचार प्रसार के लिए निर्धारित किया जा सकता है । ऐसा भी हो सकता है कि अपना काम धन्धा करते हुए सम्पर्क में आने वाले लोगों को इस विचारधारा को पढ़ने या समझाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके । दुकानदार, चिकित्सक, वकील, अध्यापक, सरकारी कर्मचारी आदि कितने ही वर्ग ऐसे हैं जिन्हें दिनभर लोगों के साथ सम्पर्क रखना पड़ता है । वे लोग अपने काम-काज की बातें करने के साथ-साथ इस विचारधारा को पढ़ने-सुनने के लिए सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों को आसानी से प्रोत्साहित कर सकते हैं । जनसम्पर्क का कोई न कोई उपाय हमें निकालना ही चाहिए । लोगों को यह पुस्तकें, पढ़ने-सुनने के लिए तत्पर करने के अतिरिक्त, उन्हें व्यक्तिगत रूप में चर्चा करते हुए बहस एवं विचार विनिमय करते हुए, आवश्यक प्रोत्साहन

देना चाहिए । यह व्यक्तिगत प्रोत्साहन जब तक न मिलेगा, विचार विनिमय द्वारा शंकाओं का समाधान और भ्रान्तियों का निवारण न किया जायगा, तब तक केवल पढ़ने-सुनने मात्र से ही अभीष्ट प्रयोजन पूरा न होगा ।

विचारधारा का व्यापक विस्तार

यों यह विचारधारा सर्वसाधारण तक पहुँचाये जाने योग्य है । जिनके बाल-बच्चे हैं, चाहे छोटे हैं चाहे बड़े, आज नहीं तो कल उन्हें विवाह करने ही होंगे । इसके लिए उनका मस्तिष्क पहले से ही साफ रहना चाहिए । कन्याओं के अभिभावकों को जो पैसा विवाह में लगाना है वह कन्या की शिक्षा में खर्च कर देने के लिए कहना चाहिए । लड़के वालों को धूम-धाम की अपेक्षा सादगी के वातावरण में विवाह करना चाहिए और अपने से गरीब घर की लड़की लेने की बात सोचनी चाहिए । जिन्हें अभी हाल में विवाह करने ही नहीं हैं वे भी इस तरह सोचना आरंभ कर दें तो समय पर यह पूर्व निर्मित मनोभूमि बहुत उपयोगी सिद्ध होगी और उसके कारण वे अभी से अनावश्यक चिन्ताओं से छुटकारा पाकर निश्चिन्त रहेंगे । जिनके बच्चे विवाह योग्य हैं वे अपनी मान्यता आदर्श विवाहों के अनुरूप बना लेंगे तो उससे उन्हें अपने विचारों के अनुकूल सम्बन्ध ढूँढ़ने की चिन्ता होगी और इस ढूँढ़-खोज के प्रयत्नों में इस विचारधारा की चर्चा होने लगेगी । प्रयत्न करने पर उपयुक्त संयोग मिलेंगे ।

इस सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि एक पक्ष तैयार होता है तो दूसरा उसके अनुकूल स्थिति और अनुकूल विचार का नहीं मिलता । लड़की वालों को यह कठिनाई विशेष रूप से होती है । वे इच्छित स्थान पर कन्या देने के लिए अपनी सामर्थ्य से बाहर खर्च करने को भी तैयार हो जाते हैं । लड़के वालों की जो स्थिति आज है यदि वे बिना खर्च का विवाह करना चाहें और अपने से गरीब घर की लड़की लेने को तैयार हों तो उन्हें तनिक भी कठिनाई सामने न आवे । इसलिए

इस सम्बन्ध में पहला कदम लड़के वालों को ही उठाना होगा ।

होता यह है कि जब किसी को लड़की ब्याहनी होती है तब वह सुधारवादी बनता है, दहेज की निंदा करता है और आदर्श विवाहों का समर्थन करता है, पर जब उसका लड़का विवाह के योग्य होता है तो सारे आदर्श सिद्धान्तों को तिलाञ्जलि देकर धन का लालच और इज्जत का प्रश्न सामने आ खड़ा होता है । तब पिछले आदर्शवादी विचारों को बदलते देर नहीं लगती । कुछ दिन पहले का विरोध आज के समर्थन में बदल जाता है । यह दुमुँही नीति बड़ी घातक है । इसी के बरते जाने से अभी तक कोई ठोस सुधार कार्य इस दिशा में हो सकना सम्भव नहीं हुआ ।

वर पक्ष की जिम्मेदारी

आदर्श विवाहों की सफलता की तीन-चौथाई जिम्मेदारी लड़के वालों पर और एक-चौथाई लड़की वालों पर है । लड़की वालों पर तो इतना ही जोर डालो कि वे वर पक्ष के द्वारा होने वाली धूम-धाम में अपनी रुचि या प्रसन्नता व्यक्त न करें वरन् उसे निरुत्साहित करें । दूसरी जो थोड़ी कठिन अड़चन उन्हें पार करनी है वह है अपनी लड़की के लिए जेवर और कीमती कपड़ों के न होने पर भी प्रसन्नता व्यक्त करना । उन्हें इसी के लिए जोर देना चाहिए ताकि लड़के वालों पर अनावश्यक भार न पड़े और वे दहेज न मिलने पर भी कोई विशेष कठिनाई अनुभव न करें । यदि वे इतनी बात के लिए सहमत हो जाते हैं तो समझना चाहिए कि उनने अपने हिस्से की सुधारवादिता पूरी कर ली ।

लड़के वालों को कुछ अधिक साहस करना पड़ता है । उन्हें दहेज का प्रलोभन त्यागना पड़ता है । जेवर बनवाने में पैसा तो एक प्रकार से बेकार ही पड़ जाता है, पर इतना सन्तोष रहता है कि वह घर में मौजूद है और रुपये के स्थान पर आठ-दस आने तो उसे बेचकर प्राप्त किए ही जा सकते हैं । इतना प्रलोभन भी

छोड़ सकना थोड़े अधिक साहस की बात है । यों परोक्ष रूप में कभी न कभी लड़की का पिता अपनी बच्ची को कुछ न कुछ उपहार देता ही है और वह आमदनी आखिर फिर से आ ही जाती है भले ही उस खींचतान की तुलना में थोड़ी कमी ही क्यों न रहे ? इस कमी की पूर्ति शादी में होने वाली धूम–धाम घट जाने से भी पूरी हो जाती है । इसलिए वस्तुतः लड़के वाले को भी कोई खास घाटा नहीं रहता । फिर भी चूँकि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से लड़के वाला अपने आप को लाभ प्राप्त करने वाला सोचता है और जब उसे उसकी पूर्ति होती नहीं दीखती तो उसे कुछ झटका–सा लगता है, चाहे वह झूठा ही क्यों न हो । यह एक विचार तो है ही और वास्तविकता न सही, कल्पनात्मक ही सहीं, लालच तो लालच ही है । उसे छोड़ने के लिए कुछ साहस तो चाहिए ही । इसलिए यह आन्दोलन लड़के वालों की सहमति से ही चल सकता है । हमारे प्रचार आन्दोलन का लक्ष्य प्रधानतया लड़के वालों को इस उदारता के लिए तैयार करने का होना चाहिए । क्योंकि अधिक श्रम उसी में पड़ेगा । लड़की वालों को तो आसानी से सहमत किया जा सकता है ।

अविवाहितों को आवश्यक प्रेरणा

भारत में अभिभावकों की सहमति ही विवाह के निश्चय का प्रधान माध्यम होती है । इसलिए उनको सहमत कर लेने से आन्दोलन की सफलता बहुत कुछ सम्भव हो सकती है । किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि केवल उन्हीं तक प्रयत्न सीमित रखना चाहिए । यह आन्दोलन सोलह वर्ष से अधिक आयु के लड़कों में भी फैलाया जाना चाहिए । क्योंकि नवयुवकों में प्रलोभन का कम और आदर्शवादिता का अंश ज्यादा रहता है । वे हर बात में उतना लालच करने के अभ्यस्त नहीं होते, जितनी कि ढलती आयु वाले । आदर्शवादी विचारधारा का प्रभाव शुद्ध और सरल हृदय पर अधिक पड़ता है । बालक अपेक्षाकृत अधिक निर्मल होते हैं । हर बात में

दाव-घात सोचने की धूर्तता उनमें उतनी नहीं होती जितनी कि बड़ों में। बड़े जहाँ धूमधाम में अपने सरीखे पुरान-पंथियों की प्रशंसा में 'इज्जत' सोचते हैं वहाँ लड़कों को आदर्श के लिए कष्ट सहने और त्याग करने का शौर्य दिखाने में सन्तोष होता है। उत्सर्ग एवं बलिदान का जितना माद्दा नए रक्त में रहता है उतना पुराने लोगों के ठण्डे खून में नहीं रहता। विवाहोन्माद के निराकरण के लिए आदर्श विवाहों के रूप में सामाजिक क्रान्ति उपस्थित करने के लिए जिस साहस एवं शौर्य की अपेक्षा है, वह युवकों में प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकता है। इसलिए इसे आन्दोलन का लक्ष्य बनाये रहना चाहिए। उसकी उपेक्षा करके केवल अभिभावकों को सहमत करने के प्रयास तक सीमित रहने से काम न चलेगा। हमें अधिक आशा नई पीढ़ी के नये रक्त से ही करनी चाहिए।

स्कूल-कॉलेजों में इस आन्दोलन को फैलाने के लिए विशेष रूप से प्रयास किया जाना चाहिए। अध्यापक वर्ग चाहे तो इस दिशा में बहुत काम कर सकता है। इस ट्रैक्ट माला में १० पुस्तिकायें लिखी गई हैं। एक-एक करके दस को बाँट दी जायें और एक दिन पढ़ने के लिए कहा जाय। दूसरे दिन एक की पुस्तक दूसरे को और दूसरे की तीसरे को पढ़ने के लिए परिवर्तित कर दी जायें। इस प्रकार दस दिन में दस लड़के एक सैट से लाभ उठा सकते हैं। तीन दिन में तीस लड़के। इस प्रकार एक सैट को भी कई महीने घुमाते रहने से बहुत से लड़के एक वर्ष में इन्हें पढ़ सकते हैं। अच्छा हो एक अध्यापक अपनी पुण्य कमाई में से कुछ बचत कर दस-पाँच सैट खरीद लें-या कई अध्यापक एक-एक सैट अपने पास रखें और उन्हें मिला-जुलाकर पढ़ाया जाय तो यह प्रचार कार्य और भी जल्दी हो सकता है। कोई उदार व्यक्ति अपनी ओर से इस साहित्य को छात्रों को पढ़ाने के लिए मँगा दें और उन्हें अध्यापकों द्वारा या सीधे समाज सेवियों द्वारा अथवा प्रबुद्ध छात्रों द्वारा अपने सहपाठियों को पढ़ाया जाय तो

प्रस्तुत विचारधारा को अविवाहित लोगों को हृदयंगम कराने में बड़ी सहायता मिल सकती है ।

नवयुवक आगे बढ़ें

जिन छात्रों ने इन विचारों को पढ़ लिया है, उनकी विचार गोष्ठियाँ बुलाई जायें और उन्हें प्रेरणा दी जाय कि वे नारी जाति के प्रति अपनी श्रद्धा एवं उदारता प्रदर्शित करने के लिए–समाज को एक प्राण–घातक दलदल में से निकालने के लिए थोड़ा साहस दिखाने के लिए कटिबद्ध हों । इस तरह की गोष्ठियों में भावनाशील युवकों को साहित्य, भाषण, परामर्श एवं विचार विनिमय के माध्यम से यदि प्रभावित किया जाय तो उनमें से अधिकांश ऐसे होंगे जो बिना दहेज का सादगी सम्पन्न आदर्श विवाह करने के लिए सहमत हो सकें ।

जो सहमत हो जायें उनसे प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कराने चाहिए । इस प्रकार के प्रतिज्ञा पत्र 'युग निर्माण योजना' द्वारा छापे गये हैं, जिन्हें समाज सेवी व्यक्ति यहाँ से मँगा सकते हैं या अपने यहाँ छपा सकते हैं । जहाँ छपे हुए न हों वहाँ लिखकर भी काम चलाया जा सकता है । यह प्रतिज्ञा आन्दोलन तेजी से चलाया जाना चाहिए । जिन लड़कों ने स्वयं हस्ताक्षर किए हैं उन्हें अगला कदम यह भी उठाने के लिए प्रेरित करना चाहिए कि वे अपने साथी–सहपाठियों को प्रभावित कर उनसे भी इसी प्रकार की प्रतिज्ञा करा लें । इस प्रकार एक से दूसरे को, दूसरे से तीसरे को प्रेरणा मिलती रहे तो धीरे–'धीरे यह आन्दोलन समस्त शिक्षा संस्थाओं में फैल सकता है । अध्यापक वर्ग को इमसें थोड़ी–सी अभिरुचि लेने के लिए तत्पर किया जा सके तः लाखों छात्र इसके लिए तैयार हो सकते हैं । सुधारवाद की यह चिनगारियाँ इस तरह बिखेरी जायँ तो वे वर्तमान कुरीतियों के कूड़े–करकट को जलाकर भस्म कर डालने वाली दावानल के रूप में परिणत हो सकती हैं ।

जो लड़के प्रतिज्ञा करें, उनमें सचाई, साहस और दृढ़ता भी

होनी चाहिए । गुपचुप हस्ताक्षर तो कर दें पर जब वह बात घर वालों के सामने जावे तो झिझक, संकोच और डर से बात से मुकरने के लिए तैयार हो जायें या छोटी–सी झिड़की पड़ते ही अपना वचन तोड़ दें तो ऐसी कमजोरी से कुछ काम न चलेगा । प्रतिज्ञा करते समय उन्हें इस हद तक दृढ़ हो जाना चाहिए कि वे आदर्श की रक्षा के लिए प्रहलाद की तरह बड़े से बड़े कष्ट, अपमान एवं दण्ड सहने को तैयार हों । आजीवन अविवाहित भले ही रह जायें पर प्रतिज्ञा कदापि न तोड़ेंगे, यह दृढ़ता जिनमें होगी वे अन्त तक अपने वचन पर आरूढ़ रह सकेंगे । इसलिए प्रतिज्ञाकर्त्ताओं में दृढ़ता कूट–कूट कर भरी जानी चाहिए । इस आन्दोलन में सभी अविवाहित युवक भाग ले सकते हैं, भले ही वे पढ़ रहे हों पढ़ाई छोड़ चुके हों । सामाजिक क्रान्ति में आवश्यक साहस दिखाने और त्याग करने के लिए नई पीढ़ी का यदि ठीक ढंग से आवाहन किया जा सके तो आशाजनक प्रत्युत्तर मिलेगा । संसार के युवक आग से खेलने और मौत से जूझने की बहादुरी दिखा रहे हैं, तो क्या भारतीय युवक मूढ़ता भरी कुरीति को ठुकरा देने का भी साहस न कर सकेंगे ? विश्वास करना चाहिए कि इनकी ओर से उत्साहवर्द्धक उत्तर मिलेगा ।

नये रक्त को नवयुग की चुनौती

जो युवक प्रतिज्ञा करें उन्हें पूरी जिम्मेदारी, सचाई और बहादुरी के साथ ही वैसा करना चाहिए । उन्हें अपने अभिभावकों को अपने निश्चय की नम्र किन्तु दृढ़ शब्दों में सूचना दे देनी चाहिए ताकि समय आने पर अनावश्यक झंझट पैदा न हो । जब अभिभावक जान लेंगे कि लड़का अविवाहित रहने तक का त्याग करने के लिए तैयार है तो उन्हें नरम होना ही पड़ेगा । वे आदर्श विवाह की ही व्यवस्था करेंगे । जो कार्य प्रस्तावों और लेखों द्वारा नहीं हो सकता, वह दृढ़ प्रतिज्ञ लड़कों के कठोर निश्चय द्वारा सहज हो सकता है । अपने बच्चों की इच्छा और खुशी के लिए

अभिभावक जब बड़े से बड़ा कष्ट सहते हैं, त्याग करते हैं, तो क्या घृणित कुरीति को त्यागने के लिए तैयार न होंगे ? होंगे, अवश्य होंगे, बच्चों की प्रतिभा में यदि दृढ़ता और सचाई होगी तो अभिभावकों को सहमत होने में देर ही कितनी लगेगी ।

राष्ट्र का 'नव निर्माण' करने के लिए नवयुवकों को कितने ही प्रकार के संघर्ष करने हैं । आज जीवन के हर क्षेत्र में अनीति एवं अव्यवस्था छाई हुई हैं । गरीबी, बीमारी, अशिक्षा, अनैतिकता, अधार्मिकता, नशेबाजी, उच्छृंखलता, अनीति, संकीर्णता आदि अगणित दुष्प्रवृत्तियों से अगले दिनों लोहा लेना पड़ेगा । क्रान्ति के लिए—सामाजिक कार्य के लिए नई पीढ़ी के कन्धों पर अत्यन्त महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ आई हैं । राजनैतिक क्रान्ति करने वाले वीर, बलिदानी फाँसी, गोली, जेल, आर्थिक बरबादी आदि सहते हुए अपनी जिम्मेदारियाँ पूरी करके विदा हो गये । वे नई पीढ़ी पर उपरोक्त तीन क्रान्तियों का भार सौंप गये हैं, जो पिछली पीढ़ी के शहीदों की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन एवं महत्वपूर्ण हैं । यदि सामने प्रस्तुत कर्तव्यों की चुनौती को स्वीकार करने से नई पीढ़ी इन्कार करेगी तो उसे दशों दिशायें धिक्कारेंगी । भीरुता और कायरता का निन्दित जीवन तो गीताकार ने मृत्यु से भी बुरा बताया है । भारत का नवयुवक इस पंक्ति में खड़ा होना पसन्द न करेगा । उसे अपने समय की चुनौतियाँ स्वीकार करनी ही पड़ेंगी । इसी दिशा में एक छोटा—सा प्रयोग—(रिहर्सल) यह आन्दोलन है । बिल्ली घायल चूहे को मुँह से छोड़कर अपने बच्चे को शिकार करने की शिक्षा देती है । उसी प्रकार नई पीढ़ी के लिए यह आन्दोलन एक छोटा—सा प्रयोग—अभ्यास मात्र है । जो अत्यन्त कोमल हृदय अभिभावकों तक को सही मार्ग अपनाने के लिए बदल न सकें, भला वे अगले महत्वपूर्ण कार्यों की भूमिका कैसे सम्पादित करेंगे ? अगले दिनों जिन नर—रत्नों की, महापुरुषों की राष्ट्र को आवश्यकता पड़ेगी, जो राष्ट्र का सही

नेतृत्व करेंगे उनके प्रतिभा एवं साहस की यह छोटी-सी कसौटी मात्र है। इस पर तो भारत का हर युवक खरा उतर ही सकता है।

लड़कियाँ भी पीछे न रहें

लड़कियों को आज जिस स्थिति में रहना पड़ता है उससे वे बहुत दबी-भिची हुई हैं। इसलिए सबसे तो वैसी आशा नहीं की जा सकती, पर जो सुशिक्षित एवं साहसी कुमारियाँ हैं, वे अविवाहित रहने का खतरा उठाकर यह प्रतिज्ञा कर सकती हैं कि यदि बिना दहेज स्वीकार करने वाले लड़के न मिलें तो वे आजीवन कुमारी रहने का त्याग करके भी धन-लोलुप, वर-विक्रयी लोगों के घर में न जाना ही श्रेयस्कर समझेंगी। दहेज की वेदी पर हर वर्ष सहस्रों विवाहित लड़कियों का रोमांचकारी उत्पीड़न एवं बलिदान होता है। जीवित चमड़ी उतारने जैसा त्रास विवाह होने के उपरान्त वे सह सकती हैं, तो अविवाहित रहने में अपेक्षाकृत कम खतरा है, उसे तो उन्हें हँसते हुए उठाना चाहिए। हत्यारे दहेज का पिशाच सहस्रों लड़कियों का गरम-गरम खून पी चुका, अब थोड़ी-सी लड़कियाँ अविवाहित रहकर भी इस पिशाच का खप्पर भर सकें तो इनके त्याग से समाज के कर्णधारों की आँखें खुलेंगी ही, आत्महत्या से यह तरीका उत्तम है। जिनके अभिभावक अधिक चिन्तित हैं, उनकी कन्यायें इस प्रकार साहसिक कदम उठाकर ब्रह्मचर्यपूर्वक पवित्र जीवन रखने की प्रतिज्ञा करते हुए स्वावलम्बी जीवन व्यतीत कर सकती हैं।

कह नहीं सकते बेचारी लड़कियाँ इस प्रकार का साहस कर सकेंगी या नहीं, पर यदि उनमें से थोड़ी-सी भी कर सकें तो उनकी प्रतिज्ञा समाज में तहलका मचाने का तो आधार बन ही सकती है और उनके इस त्याग से इस दुर्बुद्धि के पिशाच का मरण दिन अपेक्षाकृत अधिक निकट आ सकता है। प्रतिज्ञा आन्दोलन लड़कियों के लिए भी लड़कों की ही तरह खुला रहना चाहिए।

अध्यापिकाऐं तथा समाजसेवी महिलाऐं स्त्रियों में यह प्रचार कर सकती हैं ।

प्रचार और प्रोत्साहन

पुरुषों और महिला अभिभावकों में भी यह प्रतिज्ञा आन्दोलन चलना चाहिए । जिनके बच्चे या बच्चियाँ हैं वे उनका विवाह काल आने से पूर्व ही यदि यह प्रतिज्ञा कर लें कि हम आदर्श विवाह करेंगे तो उनके मस्तिष्क में एक निश्चित बात जमी पड़ी रहेगी और समय पर उपयुक्त तरीका अपनाने में कठिनाई न होगी । इसलिए पुरुषों में पुरुष और महिलाओं में महिला इस प्रकार का हस्ताक्षर आन्दोलन चलाने के लिए घर–घर अलख जगाते हुए भ्रमण कर सकते हैं । ध्यान रखने की बात इतनी ही है कि बिना अच्छी तरह समझे या समझाये, हड़बड़ी में जल्दी–जल्दी हस्ताक्षर कराने की उतावली नहीं करनी चाहिए । पहले आवश्यक साहित्य पढ़ा और पढ़ाया और सुनाया जाय, विचार विनिमय करके सहमत किया जाय और जब आवश्यक विचार परिवर्तन हो जाय तभी किसी से प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कराना चाहिए । दृढ़ता के साथ परिपक्व मन से की हुई प्रतिज्ञा का ही कुछ महत्त्व है और वही कुछ निभती भी है ।

जब कभी जहाँ भी आदर्श विवाह हो तब उनका प्रचार एवं सार्वजनिक अभिनन्दन करने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि जिन लोगों ने साहसपूर्ण कदम उठाये हैं उन्हें प्रोत्साहन मिले । यह प्रचार विज्ञापन इसलिए भी आवश्यक है कि अधिकाधिक लोगों को उसकी जानकारी मिले और वे भी अनुकरण करने के लिए प्रेरणा प्राप्त कर सकें । कुछ दिन उपरान्त तो यह एक बिल्कुल साधारण स्वाभाविक बात हो जाने वाली है, पर अभी तो आदर्श विवाह का आयोजन एक बड़े साहस, त्याग एवं आश्चर्य का विषय माना जायगा । इसलिए उसे अपनाने में लोगों को काफी झिझक एवं हिचकिचाहट होगी । उस मानसिक दुर्बलता को दूर करने के लिए वैसे उदाहरणों

का प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है । ऐसे साहसपूर्ण प्रयासों की जानकारी अधिक लोगों को मिले, यही तो प्रचार का उद्देश्य है ।

सामाजिक कुरीतियों को कुचलते हुए, प्रतिक्रियावादियों का उपहास, व्यंग एवं विरोध सहते हुए जिन लोगों ने इस प्रकार का साहस प्रदर्शित किया है, लोगों की परवाह न करते हुए, विवेक को महत्व दिया है, निस्संदेह वे साहसी, शूर, आदर्शवादी और नेतृत्व कर सकने की क्षमता सम्पन्न व्यक्ति थे । उनकी प्रशंसा और प्रतिष्ठा होनी ही चाहिए । जहाँ वीर पूजा नहीं होती, वह भूमि वीर विहीन हो जाती है । इसलिए प्रयत्न यह किया जाना चाहिए कि इन आदर्शवादी विवाहों को, उनके संयोजकों को, विवेकशील एवं संभ्रान्त लोगों का समर्थन, सहयोग, सद्भाव एवं आशीर्वाद प्राप्त हो ।

अभिनन्दन एवं आशीर्वाद

ऐसे अवसरों पर सम्भ्रान्त लोगों को आग्रहपूर्वक आमन्त्रित करना चाहिए और उन्हें अधिकाधिक संख्या में एकत्रित करना चाहिए । ऐसे उत्सवों में जो सज्जन आशीर्वाद एवं समर्थन देने आये हों–उनमें से जो भाषण कर सकते हों, वे खड़े होकर अपने विचार व्यक्त करें । दो–दो फूल मालायें लेकर सभी आगन्तुक आवें और दोनों ओर के अभिभावकों को पहनावें, जिन्होंने यह साहस प्रदर्शित किया । छपे अभिनन्दन पत्र भेंट करने की व्यवस्था हो सके तो और भी उत्तम है । उस नगर में या आसपास जो सार्वजनिक संस्थाऐं हों वे भी अपनी ओर से अभिनन्दन करें । 'युग निर्माण' शाखाओं को तो विशेष उत्साहपूर्वक ऐसे आयोजनों का अभिनन्दन करना चाहिए । जहाँ जुलूस सम्भव हों, वहाँ वह भी निकाले जायें और लाउडस्पीकर से इस विवाह की विशेषता जनता को बताई जाय । आशीर्वाद देने आने वाले व्यक्ति भोजन स्वीकार करें । इलायची जैसा छोटा सत्कार ही पर्याप्त माना जाय ।

आदर्श विवाहों की ख्याति दूर–दूर तक फैलानी चाहिए

ताकि वैसा करने का उत्साह दूसरे लोगों में भी उत्पन्न हो । हमारे देश में अभी विवेकशीलता जागृत नहीं हुई है, हर बात भेड़िया धसान की तरह एक-दूसरे की देखा-देखी होती है । लोग चाहते हुए भी किसी सुधार को साहस के अभाव में अपना नहीं पाते, पर जब उन्हें पता लगता है कि ऐसा तो अन्य कितने ही लोग कर रहे हैं, तब उनकी हिम्मत बढ़ जाती है और वे भी वैसा ही करने को उद्यत हो जाते हैं । इसलिए प्रत्येक शुभ कार्य का अधिकाधिक प्रचार होना चाहिए । विशेषतया आदर्श विवाहों की ख्याति दूर-दूर तक अवश्य फैलाई जानी चाहिए ।

समाचार पत्रों में ऐसे समाचार अवश्य भेजे जाँय । मथुरा की 'युग निर्माण योजना' पत्रिका में ऐसे समाचार बहुत प्रेम और उत्साहपूर्वक छापे जाते हैं । जिन अभिभावकों या वर-वधू के विशेष साहस से वह शुभ कार्य सम्भव हुआ हो, उनके फोटो भी छापे जाते हैं । मथुरा केन्द्रीय कार्यालय से ऐसे समाचार भारत भर की अनेक भाषाओं में छपने वाले पत्रों में प्रकाशित होने भेज दिये जाते हैं । जहाँ समाचार पत्र नहीं पहुँच सकते, वहाँ पर्चे विज्ञप्ति आदि छापकर उन विवाहों के समाचार घर-घर पहुँचाये जा सकते हैं और भी जो तरीके ऐसे समाचारों को दूर-दूर के प्रदेशों तक अधिक जनता तक पहुँचाये जाने के लिए संभव हों, वे सभी काम में लाने का प्रयत्न करना चाहिए ।

सामूहिक विवाहों की आवश्यकता

यह और भी अच्छा हो, यदि एक स्थान पर एक साथ कई आदर्श विवाह हों । दस पुनीत पर्वों पर विवाह करने में ग्रह गणित सम्बन्धी कोई अड़चन नहीं रहती । इसी प्रकार गोधूलि बेला की लग्न भी सबके लिए शुभ है । अतएव एक ही दिन एक ही समय कई विवाह साथ-साथ होने का 'सामूहिक विवाह आयोजन' बहुत ही प्रभावशाली एवं आकर्षक बन सकता है । ऐसे कई आयोजन हमने देखे हैं । कई वर्ष पूर्व फिरोजाबाद (आगरा) में माथुर वैश्यों के सात विवाह एक साथ, एक विशाल सम्मेलन में सम्पन्न हुए थे ।

विवाह मण्डप अलग–अलग बने थे । सब पर अलग–अलग पण्डित काम करते थे । केन्द्रीय व्यवस्था वेदी में लाउडस्पीकर द्वारा मंत्रोच्चारण तथा निर्देश होता था । सब विवाह मण्डपों पर क्रिया–काण्ड उसी निर्देश के अनुरूप एक साथ होते थे । मण्डप बहुत ही सुसज्जित ढंग से सजे हुए थे । देखने में सारा दृश्य बड़ा ही मनोरम था । विभिन्न संस्थाओं ने एक स्थान पर बिठाकर वर–वधू को पुष्पहार पहनाये, उनके अभिभावकों को अभिनन्दन–पत्र भेंट किए । लगभग १० हजार नर–नारी एकत्रित थे । दृश्य ऐसा भावनापूर्ण था कि हर व्यक्ति नये युग के आगमन की झाँकी कर रहा था । हत्यारे दहेज तथा सत्यानाशी विवाहोन्माद से छुटकारा पाकर जब हिन्दू जाति अपने मुख की कालिमा धो सकेगी, वह दिन सबको निकट ही दिखाई पड़ रहा था । दहेज और जेवर आदि सभी जंजालों से मुक्त पूर्ण सादगी के साथ होने वाले आदर्श विवाहों को यदि इस प्रकार सामूहिक आयोजनों के रूप में कर सकना सम्भव हो सके तो वह कितना अधिक प्रेरणाप्रद होगा ?

झाँसी के गायत्री यज्ञ के अवसर पर एक आदर्श विवाह सब प्रकार की कुरीतियों से मुक्त होकर सम्पन्न हुआ था । गायत्री यज्ञ जैसे धर्मानुष्ठान के साथ विवाहों का सम्पन्न होना सब दृष्टि से मंगलमय होता है । विवाह के कर्मकाण्ड की प्रेरणाप्रद व्याख्या समेत लाउडस्पीकर पर जो विवेचना हजारों व्यक्तियों ने सुनी उससे उपस्थित लोगों ने पहली बार जाना कि आखिर विवाह क्या है ? विवाह के अन्त में वर–वधू को एक उच्च मंच पर बिठाकर उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया । मनों पुष्पहारों में उन्हें इस तरह लाद दिया गया था कि केवल चेहरा ही चमकता था । प्रभावशाली व्यक्तियों ने आदर्श विवाह की उपयोगिता ऐसे भावनापूर्ण ढंग से समझाई कि उपस्थित लोगों में से पचासों व्यक्तियों ने उसी समय सार्वजनिक घोषणा की कि वे अपने लड़कों के विवाह आदर्शवादी

सिद्धान्तों के अनुसार करेंगे । वह अवसर भी ऐसा था जब कि जनता में उत्साह फूटा पड़ रहा था । नवयुग की झाँकी हर लड़की के पिता की आँखों में एक चमक पैदा कर रही थी ।

ऐसे सामूहिक आयोजनों के साथ आदर्श विवाहों की व्यवस्था यदि बन सके और प्रचार, अभिनन्दन आदि का सुव्यवस्थित आयोजन हो सके तो उसका आशातीत प्रभाव पड़ता है । ऐसे आयोजनों को गायत्री यज्ञ का रूप दिया जा सकता है और उसे व्यक्तिगत न रखकर सार्वजनिक समारोह मनाया जा सकता है । इससे उसका महत्व और भी अधिक बढ़ सकता है । जहाँ इस प्रकार की सम्भावना हो वहाँ ऐसी व्यवस्था बनाने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए । पंजाब में सिखों के, बिहार में मैथिली ब्राह्मणों के और मध्य प्रदेश में जैन समाज के कुछ ऐसे जातीय मेले होते हैं, जिनमें उस प्रान्त के लोग सपरिवार पर्याप्त संख्या में आते हैं और उन मेलों में जहाँ धर्म प्रचार कुरीति-उन्मूलन, संगठन आदि सम्बन्धी भावनाऐं विकसित होती हैं वहाँ बहुत बड़ी तादाद में सामूहिक विवाह भी होते हैं । कम खर्च में सारी प्रक्रिया निपट जाती है और उपस्थित लोगों को आवश्यक प्रकाश प्रोत्साहन भी प्राप्त होता है । इस व्यवस्था का अनुकरण जहाँ कहीं भी सम्भव हो सके किया ही जाना चाहिए । आदर्श विवाहों के प्रचलन में उनके सामूहिक आयोजनों की श्रृंखला बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है ।

प्रतिरोधात्मक तैयारी

एक ओर जहाँ विचार-विस्तार एवं रचनात्मक कार्यों के लिए हमें अधिकाधिक प्रयत्न करना चाहिए, वहाँ दूसरी ओर निषेधात्मक आन्दोलन की भी तैयारी करनी चाहिए । अनुपयुक्त कार्यों को रोकने के लिए उनका विरोध करना भी आवश्यक होता है । बेशक इसमें कटुता बढ़ने और झंझट खड़ा होने का खतरा मौजूद है, पर आखिर यह भी तो उठाना ही पड़ेगा । क्रान्तियाँ इतनी सरल नहीं

होतीं । उनमें जड़ता और मूढ़ता भी कम नहीं रहती, वह ऐसी कठोर भी हो सकती हैं कि विवेक, तर्क, विनय आदि का उस पर कुछ भी प्रभाव न पड़े और चिकने घड़े की तरह सब कुछ सुन समझ लेने पर भी अपनी हठवादिता को छोड़ने को तैयार न हों । कई लोग ऐसे अहंकारी होते हैं जो अपने लोभ और हठ को किसी के कहने–सुनने या बताने समझाने से छोड़ने के लिए टस से मस नहीं होते । ऐसे लोगों की कठोर मनोभूमि विरोध–प्रतिरोध की भाषा ही समझ सकती है । उन्हें जब यह प्रतीत होता है कि हमारे विरुद्ध घृणा और तिरस्कार का वातावरण बन रहा है, बदनामी फैल रही है तो वे नरम हो जाते हैं । दुराग्रही व्यक्ति वस्तुतः कायर होते हैं । विवेकशील तो समझ की बात, न्याय, बुद्धि से स्वीकार कर लेते हैं, पर अहंकारी एवं अविवेकियों को केवल डर ही झुका सकता है । इसलिए हमें उस पक्ष का भी निर्माण करना चाहिए जिसके प्रभाव से अवांछनीयता को दृढ़तापूर्वक पकड़े हुओं के दुराग्रह को भी बदलने के लिए पुनर्विचार करने का अवसर मिल सके ।

हर जगह धर्म सेना का गठन होना चाहिए । कुछ लोग स्वयं–सेवक बनें और समय आने पर अपना समय लगाने तथा विरोध करने पर उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया स्वरूप जो कष्ट हानि या अपमान सहना पड़े, उसे सहन करने के लिए प्रसन्नतापूर्वक तैयार रह सकें ।

सत्याग्रही का रण कौशल

इस मोर्चे पर युद्ध नीति के सभी पहलुओं को अपनाया जाना चाहिए और संघर्ष इस ढंग से इतनी मात्रा में उत्पन्न करना चाहिए जिससे द्वेष–दुर्भाव अधिक न बढ़ने पावे और प्रयोजन भी एक सीमा तक पूरा हो जाय । थोड़ी कटुता जो उत्पन्न होती है, उसे हँस मुख लोग आसानी से सुधार–सँभाल सकते हैं । अवसर आने पर गले में बड़े पोस्टर लटकाकर शान्त प्रदर्शन के रूप में कुछ स्वयंसेवक उन आयोजनों के प्रवेश द्वार पर खड़े हो जायें और उसमें सम्मिलित

होने वालों को अपना मन्तव्य समझाते रहें तो यह मौन विरोध भी बड़ा कारगर हो सकता है । संभवतः इस बार तो वह आयोजन किसी प्रकार पूरा हो जायगा पर दूसरे लोग जो इसमें सम्मिलित हुए हैं, यह शिक्षा लेकर अवश्य जाँयेंगे कि पैसा खर्च करने, परेशानी उठाने पर भी यदि निंदा होती है तो ऐसे काम को क्यों किया जाय ? अपव्यय का उद्देश्य दूसरों के द्वारा प्रशंसा प्राप्त करना होता है, यदि वह न मिले, उलटे बदनामी फैले तो लोग उसे छोड़ना ही पसन्द करेंगे । इसलिए कुरीतियाँ अपनाने वालों में विरोध और निन्दा होने का भय उत्पन्न किया जाना चाहिए । इसका एक उपाय गले में बड़े पोस्टर लटकाकर एक जत्थे के रूप में उस कुरीति आयोजन के प्रवेश द्वार के समीप मौन रूप से खड़े रहने पर भी बहुत कुछ लाभ हो सकता है । अपने उद्देश्य को समझाने वाले पर्चे भी यदि वे लोग अपने आस-पास जमा होने वाले लोगों को वितरित करते रहें तो इसका प्रभाव और भी अधिक हो सकता है ।

वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह जैसे अनीतियुक्त कार्यों के लिए तो सत्याग्रह करना एवं सरकारी सहायता लेना भी आवश्यक है । बहुत छोटे बच्चों के बाल-विवाहों में बाल-विवाह निरोधक कानून की सहायता लेकर उन्हें रुकवाया जा सकता है । ५० से अधिक व्यक्तियों के प्रीतिभोजों पर बहुत जगह कानूनी प्रतिबन्ध है । ऐसी बातों को रोकने के लिए कानूनी दण्ड का संकेत कर देने मात्र से लोगों की हवा बिगड़ने लगती है । प्रदर्शनों और पर्चों में यदि यह संकेत कर दिया जाय तो अपराधी लोग डर जाते हैं, उन्हें भय लगता है कि कहीं यह प्रदर्शन करने वाले कोई कानूनी बखेड़ा खड़ा न कर दें । भले ही कुछ किया न जाय, पर आधा सुधार तो डरा देने मात्र से हो सकता है । दहेज विरोधी कानून अभी कुछ समय पूर्व ही पास होकर चुका है । उसकी धाराऐं दहेज लेने और देने वालों को जेल भिजवा सकती हैं । अभी तक इस कानून की समुचित

जानकारी लोगों को नहीं हो पाई है । अच्छा हो उसका स्वरूप जनता को समझाया जाय और उन्हें अपराध करने पर दण्ड मिलने की आशंका से डराया जाय । इस तरह भी प्रतिरोध बहुत अंशों तक सफल हो सकता है । इसके अतिरिक्त स्थिति के अनुरूप अन्य उपाय भी सोचे जा सकते हैं । इन उपायों को कार्यान्वित करने के लिए निर्भीक किन्तु नम्र प्रकृति के सत्याग्रही धर्म सैनिक हर जगह बनने और आगे बढ़ने चाहिए ।

वैयक्तिक प्रतिरोध एवं सुधार प्रयास

वैयक्तिक रूप से विरोध की प्रक्रिया भी चलती रहनी चाहिए । हममें से जिसका प्रभाव जहाँ हो वहाँ उस प्रभाव का उपयोग करके इन कुरीतियों को घटाने–मिटाने का प्रयत्न करना चाहिए । अपने घर, कुटुम्ब, मित्र एवं रिश्तेदारी में तो ऐसा सुझाव अधिक जोर देकर भी दिया जा सकता है । यदि वे न मानें तो अपने असहयोग की, उस विवाह में सम्मिलित न होने की बात भी कही जा सकती है । असहयोग वहीं करना चाहिए जहाँ यह आशा हो कि इस दबाव से वे लोग पुनर्विचार कर सकेंगे । जहाँ ऐसी आशा न हो वहाँ उन आयोजनों में सम्मिलित होकर अपनी विचारधारा के पक्ष में जितना भी वातावरण बन सके उतना बनाना चाहिए । रूठ बैठना या ऐसे पुराने ढर्रे के विवाहों से असहयोग करते रहना, उनमें न जाना ठीक नहीं, वरन् ठीक यह है कि भीतर घुसकर थोड़ा–बहुत जो कुछ सुधार सम्भव हो कराया जाय अन्यथा प्रतिपक्षी प्रचार किया ही जाय ।

सामाजिक क्रान्ति एक प्रकार की ठण्डी लड़ाई है । जहाँ तक हो सके सिर फुटौवल की तो नौबत नहीं ही आने देनी चाहिए । आ ही जाय तो स्वयं सहना चाहिए, सामने वालों को तनिक भी चोट नहीं पहुँचने देनी चाहिए, क्योंकि उत्पीड़न सहने वाले के पक्ष में ही लोक–मत बनता है और उसे ही सहानुभूति मिलती है । यह उपलब्धि अपने शरीर को कष्ट भले ही दे, पर लक्ष्य की पूर्ति में

सहायक ही बनेगी । दूसरों को चोट पहुँचा कर हम जनता की सहानुभूति खो सकते हैं । इसलिए जहाँ संघर्ष की, आक्रमण की सम्भावना हो वहाँ सत्याग्रही के लिए आवश्यक उपरोक्त तथ्य को पूरी तरह ध्यान में रखे रहना चाहिए । सामाजिक क्रान्ति की लड़ाई में सत्याग्रही की रीति–नीति अपना कर ही हमें चलना चाहिए, क्योंकि सफलता की अधिक सम्भावना इसी पर निर्भर रहेगी ।

'न कुछ' से 'कुछ' अच्छा.........

शिक्षा की दृष्टि से हम जितने पिछड़े हुए हैं, विवेक की दृष्टि से उससे भी अधिक पिछड़े हुए हैं । लगभग १७ प्रतिशत शिक्षित अपने देश में हैं, पर विवेकवान उससे चौथाई भी नहीं । दूरदर्शिता और स्वतन्त्र चेतना के आधार पर किन्हीं समस्याओं पर विचार कर सकने की क्षमता जिनमें मिल सके ऐसे लोग उँगलियों पर गिनने लायक हैं । अधिकांश जनसमूह तो अपने देश में ऐसा ही है जिसके लिए प्रचलित ढर्रा ही सब कुछ है । वही उनका सनातन धर्म है । उसी में गर्व और सन्तोष मिलता है । भेड़ों की तरह एक जिधर चले, उधर ही औरों का चल पड़ना अपनी परम्परा भी बन गई है । इसी के आधार पर अनेक अन्धविश्वास ऐसे ही बनते, बढ़ते, पनपते रहते हैं । अगणित कुरीतियाँ भी अपने समाज में ऐसे ही जन्मी और बढ़ी हैं ।

अब जब कि 'नव–निर्माण' की चुनौती सामने प्रस्तुत है, इस विषम परिस्थिति को बदलना ही पड़ेगा । वर्तमान कुरीतियों को न सहन किया जा सकता है और न उन्हें प्रचलित रहने दिया जा सकता है । यह परिवर्तन होना अनिवार्य रूप से आवश्यक है । उलट–पुलट का समय सदा कठिनाइयाँ सहने और संघर्षों में उलझने के लिए अपने आपको तैयार करना होगा । हर गाँव आज कुरीतियों का गढ़ बना हुआ है, पंच–चौधरी की तूती बोलती है । वे अपनी आयु के जितना ही अपनी समझ को भी बड़ी मान बैठे हैं । रूढ़ियों को सुरक्षित रखने की ठेकेदारी मानो उन्होंने ही ले ली हो ।

विवेक सम्मत विचारधारा का जहाँ भी जब भी प्रचलन होता है तभी वे विरोधी बनकर सामने आते हैं ।

ऐसी दशा में सुधार के लिए प्रयत्न करने वालों की हिम्मत टूटने लगती है । इस स्थिति से हमें बचना चाहिए । यह भी हो सकता है कि जहाँ परिस्थितियाँ अधिक प्रतिकूल हों, वहाँ दहेज उन्मूलन जैसा बड़ा कदम उठाने की अपेक्षा छोटे-छोटे सुधार कार्य आरम्भ किए जायें । किस स्थान पर क्या कुरीतियाँ प्रचलित हैं, वह देखना स्थानीय लोगों का काम है । छोटी कुरीतियाँ जो वैसे भी मरणोन्मुख या उपेक्षित हो चुकी हैं, उन्हें हटाने के लिए लोगों को सहमत कर लेना कुछ अधिक कठिन नहीं पड़ता । आरम्भ ऐसे छोटे सुधारों से किया जा सकता है । विवाहों में आतिशबाजी चलने से पैसा भी खर्च होता है और आग लगने का डर भी रहता है । ऐसी छोटी बुराइयाँ एक ही झटके में बिना अधिक संघर्ष के आसानी से दूर कराई जा सकती हैं । उन्हें हटाने के प्रस्ताव आसानी से पास कराये और कार्यान्वित किए जा सकते हैं ।

विवाहों में बारात की संख्या कम होना, कम संख्या में मिठाई परोसी जाना, गन्दे गीत न गाया जाना आदि सुधारों में अधिक कड़ा विरोध नहीं सहना पड़ता । सुधारक जहाँ अपना संगठन एवं समर्थन कमजोर देखें वहाँ ऐसे छोटे-छोटे सुधार आरम्भ कराने के लिए तो प्रयत्न कर ही देना चाहिए । सुधार की ओर मनोवृत्ति झुके, अन्ध-परम्पराओं के विरुद्ध सोचने के लिए मस्तिष्कों में साहस उत्पन्न हो तो अगले दिनों बड़े कदम भी उठाये जाने सम्भव हैं । जहाँ परिस्थितियाँ प्रतिकूल हों वहाँ धीमी गति से भी चला जा सकता है । पूरा न सही अधूरा ही सही, न कुछ से कुछ अच्छा । स्थिति के अनुरूप हमें कुछ तो प्रयत्न हर हालत में करना चाहिए । सुधार की दिशा में उठते हुए धीमे कदम भी अगले दिनों छोटी चिनगारी से बढ़कर दावानल बनने की तरह समयानुसार आशाजनक परिणाम उपस्थित कर सकते हैं । ◉

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा